दिशा प्रकाशन
138/16, त्रिनगर, दिल्ली-110 035

मेरी कहानियाँ

मुद्राराक्षस

मूल्य : बाईस रुपये
सर्वाधिकार : मुद्राराक्षस
प्रथम संस्करण : 1983
प्रकाशक : दिशा प्रकाशन, 138/16, त्रिनगर, दिल्ली-35
आवरण : पाली
रेखाचित्र : रणवीरसिंह बिष्ट
मुद्रक : रुचिका प्रिण्टर्स, दिल्ली-110032

MEREE KAHANIYAN (Hindi Short Stories)
by Mudrarakshas
Rs. 22.00

डॉ० धर्मवीर भारती को

रसकही

राजा साहब की बगिया से सिपाही ने जब साढ़े बारह का घण्टा ठोंका तो पेड़ा वाली बुआ के लुंजे बेटे शहजादे ने कचहरी के चपरासी की तरह आवाज लगायी, "ढोंढ़े की अम्माँ, एक तो बज गया।"

सबको मालूम था कि बगिया का सिपाही साधारण घड़ियों से आधा घण्टा पीछे रहता है। ढोंढ़े की अम्माँ ने अपने प्यारे कलेजे के टुकड़े, ढोंढ़े की बहू को एक कामचलाऊ गाली सुनायी और दीवार के कोने में थोड़ी-सी पीक थूक दी। यह तिमंजिले से नीचे उतरने की तैयारी थी। उसके सपूत ढोंढ़े ने साँप सितारा और मछली चिपकाकर रिपटनेवाली, मैगनेट की विलायती फिरकनी खलीते में डाली, कोने से घिस गए ताशों की गड्डी सुथने के नेफे में अटकायी और माँ को घूरता हुआ अपने पेट के बीचों-बीच उगी मुक्के-जैसी बेमतलब-सी दीखने वाली तोंदी खुजाने लगा। माँ बोली, "कुल्लन के घर जाते हो बेटा?"

उसने मासूमियत से हामी भरी। माँ ने हिदायत की, "खेलना मती, भला!"

"हाँ अम्माँ, किताब लिये जा रहा हूँ।" उसने कहा और अलमारी से जिल्द उघाड़ी हुई किस्सा तोता-मैना की किताब उतारी, बोला, "साधारण बिग्यान लिये जाता हूँ अम्माँ!"

माँ सन्तोष से कुरती में बाँहें घुसेड़ने लगी।

शहजादे की आवाज रुक्की ने भी सुनी। वह उस वक्त अपनी दोनों

छोटी बच्चियों को चावल चुगा रही थी। वह लम्बी, जवान, चौड़ी कमर और भेंगी आँखों वाली आलसी किस्म की औरत थी।

बूढ़ी पेड़ेवाली ने अपने ढीले कुन्दे की ओर देखकर परेशानी जाहिर की, क्योंकि उसकी तैयारी में अभी देर थी। कुन्दन की पोपली ताई ने दो-तीन बार झुक-झुककर कमर की हड्डियाँ चटकायीं और खजूर की चटाई का बण्डल बगल में दबा लिया। लछमीचन्द की ठिगनी लुगाई ने पहले ही अपनी तैयारी पूरी कर ली थी। पद्दन की अम्माँ का 'मन्सवा' मोजे वाले की दूकान पर मुनीम था। सुबह दस बजे तक खाना खा-पीकर चला जाता था, इसलिए पद्दन की अम्माँ प्रायः एक नींद ले लिया करती थीं। हमेशा की तरह आज भी समय से जागकर नाक के ऊपर के मस्से में उगे एक बाल को उखाड़कर फेंकने की कोशिश में मशगूल थीं। आवाज सुनने के साथ ही वे तड़पकर खट से बाहर आयीं। रुक्की, पेड़ेवाली, कुन्दन की ताई वगैरह विधानसभा के सदस्यों की तरह आकर जुटने लगीं।

लोगों के आने-जाने के रास्ते वाली सीलन-भरी गली में कुन्दन की ताई की चटाई बिछती थी।

पद्दन की माँ हमेशा की तरह निचले जीने को बतौर सिंहासन इस्तेमाल करती हुई दीवार की टेक लगाकर विराजमान हो गयीं। वे सभा की सर्व-मान्य अध्यक्षा थीं। इसके कई कारण थे। अव्वल तो यह कि उनका खाबिन्द मुंशी था जो हमेशा धुला कुरता पहनकर मुनीमगीरी करने जाता था। दोयम यह कि रतौंधी के मर्ज के बावजूद उन्हें मुहल्ले-टोले की लगी-छिपी यों जवानी याद थी, गोया जिले-परगने का जुगराफिया हो। सोयम यह किसी नयी पैदाशुदा बच्ची को जमोगा धर पकड़े तो कहाँ कण्डैल के फूल और सेंदूर का तिलक पहुँचाया जाए, यह उन्हीं को मालूम था।

घरवालियों के बच्चे मक्खियों की तरह चारों तरफ रेंग-रेंगकर भिन-कने लगे, मगर उनकी माँओं ने उन्हें धकियाकर, मुक्के मारकर और खूँथ-खूँथकर परे भगा दिया। आज दो रहस्य-चर्चाएँ विचाराधीन थीं—एक तो टनगुनलाल की लड़की का आचरण और सिउपरसाद की बिटिया का ब्याह।

जब लड़कों-बच्चों से सभा एकान्त हुई तो पद्दन की माँ ने अपने हाथ

की छोटी-सी पंखिया नीचे डाल दी और बतकही शुरू करने की गरज से जरा तनकर बैठ गयीं।

रुक्की की पिछले दिनों एक चोरी धर पकड़ी थी पद्दन की माँ ने और लोगों को सस्वर इस बात की सूचना भी दे चुकी थीं कि शिवाले के बहाने रुक्की कम्पनी बाग जाती रही है। इस सूचना के उजागर होने के बाद से रुक्की में एक खास परिवर्तन आ गया था। अब वह खुद भी ज्यादा-से-ज्यादा रसकथाओं की जासूसी में तन-मन से जुट गयी थी।

आज उनके पास बेहतर स्वादिष्ट खबर थी। पुजारी टुनगुनलाल की लड़की दरअसल मामा के घर नहीं गयी थी बल्कि भाग गयी थी। यों तो उड़ती चिड़िया के पर काटने में अपने को माहिर मानने वाली पद्दन की माँ ने यह सम्भावना कल ही जाहिर कर दी थी (भले ही चिड़िया पर कटने से पहले ही उड़ ली!) पर पक्का सबूत आज मिला। वह सबूत मिला रुक्की को। इसीलिए रुक्की आज जरा गोल के बीच बैठी थी।

पद्दन की माँ के अनुमान अक्सर सही होते थे। वे महीनों से कह रही थीं कि टुनगुन पुजारी की लड़की गुनिया और बाबूलाल में कुछ गलत कनेक्शन है। फिर अभी सुक्कर-सुक्कर सात, या समझो आठ दिन हुए होंगे जब लछमीचन्द की लुगाई ने अपनी आँख से मन्दिर के दुतल्ले की कोठरी में दोनों को बन्द होते देखा था। फिर घण्टे-आध-घण्टे बाद बाबू अँगोछा लपेटता, छत लाँघता अपने घर हो रहा और गुनिया मुई फिल्मी गाना गाती नीचे उतर गयी।

"ऐ भैना, ऐसी अन्धेर कहूँ कहीं नहीं देखी!" बिम्मो महाराजिन ने कहा और नखरे के साथ मुँह बिदोरकर खरबूजे के बीज छीलने लगी चिट्-पिट्—

"ए ले, इसकी सुन!" पद्दन की अम्माँ ने फौरन जबान पकड़ी। "ऐ इत्तीई बात में अँधेरा हो गया! चुपाय रहौ भौजी, ये नहीं हुआ अँधेरा।"

बिम्मो महराजिन की फूँक निकल गई। सभासदों ने किकियाकर हँसी की फुलझड़ियाँ छोड़ीं।

बिम्मो महराजिन दरअसल जात की सुनारिन थीं और टकहू महाराज के घर आ बैठी थीं। टकहू महाराज की अम्माँ तो महराजिन ही थीं, पर

वैधव्य के दिनों जो तीरथ करके लौटीं तो पेट में टकहू का लोंदा लिये। महराजिन घबराकर दवा-पर-दवा खाने लगीं, पर टकहू चमगादड़ की तरह पेट में ऐसे चिपके कि गिरने का नाम ही नहीं लिया। बस हुआ इतना कि टकहू की एक आँख बिलकुल साफ हो गयी और दूसरी म्यूनिसिपेलिटी की बत्ती की तरह चुन्धी हो रही। सो टकहू महाराज ने घर बिठाया बिम्मो सुनारिन को जो बाद में बिम्मो महराजिन नाम से मशहूर हुईं। टकहू की कमर कुछ दिन तो पुख्ता रही, फिर बाई ने धर दबोचा। इसके बाद बिम्मो महराजिन तो कहीं नहीं गयीं, हाँ टकहू के एक चचाजाद भाई जरूर घर आ बैठे। आए दिन टकहू और बिम्बो महराजिन में बमचख हो जाती।

उस दिन तो हद ही हो गयी, जब पद्दन की अम्माँ ने अपने रोशनदान तक मेज-कुरसी लगाकर परे झाँका। पद्दन की अम्माँ की आँखें फट गईं वहाँ का दृश्य देखकर। चारपाई पर लेटे टकहू महाराज गला फाड़कर गालियाँ बक रहे थे और बिम्मो के देवरजी बिम्मो की गोद में सिर दिए लेटे आराम से कह रहे थे, "चुपाय रहौ भौजी!"

पद्दन की माँ ने वह सारा किस्सा सभा में पेश किया तो बिम्मो के होश फ़ाख़्ता हो गये। वही बात थी जिसे कहकर आज फिर पद्दन की माँ ने बिम्मो का पत्ता काट दिया।

कुन्दन की पोपली ताई जरा भगतन किस्म की थीं सो नाहक नाक-भौं सिकोड़कर बोलीं, "बरै जाय!"

परपंच के सब्जेक्ट के प्रति अपने 'वीटो' का सदुपयोग करने के बाद ताई ने अपनी नाक घुमाई ही थी कि ढोंढ़े की अम्माँ ने बतरस के सिरके में अपनी भी अमिया तैरा दी, "ऐ ताई, अभी क्या, अभी तो गुनिया के गुन सुनो, गुनिया के!"

इतना कहकर वह खी-खी हँसीं, लेकिन उसकी हँसी में किसी ने साथ नहीं दिया और फिर वह हँसी, जो एक आश्चर्यसूचक 'आयँ' बनकर गले से निकली तो मुँह फैला-का-फैला ही रह गया।

गलियारे के अन्तिम छोर पर बनी कोठरी के दरवाजे पर न जाने कब रम्मो भुजैन चुपचाप आ बैठी थी और बित्ता-भर के आईने को घुटनों में टिकाकर सींग की कंघी से बालों के पत्ते खींच रही थी।

बिम्मो महराजिन ने पंखिया उठाकर उसकी डंडी से लछमीचन्द की लुगाई को तीन खोंचे मारे और फुसफुसाकर कहा, "ऐ बच्ची, यह कब आ गयी ?"

ढोंढ़े की अम्माँ ने याद आने पर गड़ाप से अपना मुँह बन्द किया और गर्दन लम्बी करके रम्मो को घूरने लगीं। कुन्दन की ताई ने आँखें मिच-मिचायीं और गली के छोर पर देखा, फिर मिचमिचायीं, फिर देखा, पर दिखायी कुछ भी न पड़ा। झल्लाकर कुछ कहने ही वाली थीं कि पेड़ेवाली ने घुटना हिलाकर उन्हें रोक दिया।

इनकी इस अनायास चुप्पी का भी कोई असर नहीं हुआ रम्मो पर।

रम्मो भुजैन भी पहले इसी सभा की सदस्या थी। सदस्या भी ऐसी कि हर कोई डाह करे और हर कोई हिमायत करे। डाह इसलिए हुई कि वह सबसे ज्यादा अच्छी रसीली कहानियाँ सुना सकती थी। बाकी सदस्याएँ कुछ तो उम्र की बढ़ा-बढ़ी के कारण और कुछ घर-गिरस्ती के जंजाल के कारण दाम्पत्य के रसीले पहलू के बजाय जच्चाखाने की तकलीफों और उत्तर मुँह उगले-चबाये छिनारों के अतृप्ति-भरे संस्मरणों तक ही सीमित रहती थीं। उनमें भी अगर लछमीचन्द की लुगाई ने बताया कि उसके पहलौठी वाले बच्चे के वक्त सारे दिन उल्टियाँ होती थीं तो पेड़ेवाली ने ट्रम्प मारते हुए कहा कि यह कौन बड़ी बात हुई, मेरी तो बच्चेदानी ही उलट-पुलट जाती थी। इस तरह हर एक के अनुभव एक-दूसरी से बीस ही निकलते और जाहिर था कि हर कोई अपने दर्द को ख़फ़ीफ़ साबित हुआ जानकर कुढ़ जाती। छिनारे की चर्चा और भी खतरनाक थी। उसमें या तो झूठ और सच की शहादत के नाम पर तू-तू मैं-मैं हो जाती या फिर एक-दूसरी की लगी-लपेट खोलने की नौबत आती। और वाकआउट हो जाता।

कुछ भी हो, उनके चर्चे इतने रस-भरे नहीं थे जितने रम्मो के। वह पीछे छः-साल के रोमानी जीवन में न तो माँ ही बनी थी और न ही उसकी शादी हुई थी। भुजैन सिर्फ उसके सुर्मई रंग की वजह से कहा जाता था वरना वह जात की मालिन थी। सबसे मजे की बात तो यह कि बिना ब्याह हुए ही वह माँग में सिन्दूर तक भर लेती थी।

उसकी हिमायत करने को सभी उत्सुक रहती थीं, पर भीतर-भीतर

एक हसद महसूस करती थीं। रम्मो मुँहफट भी खासी थी और चटोरन भी। मुँहफट थी, इसलिए अपने ऊपर बातों का दाँव नहीं पड़ने देती थी और खुद चटोरी होने के बावजूद दूसरों को खिलाने में खासी फर्राखदिल थी। ढोंढ़े की अम्माँ को तो उसने एक दिन गिनकर पूरे सोलह गोलगप्पे खिला दिये। यह बात दूसरी है कि दूसरे दिन बरफ की लस्सी पीने के बाद भी उन्हें शक होता रहा कि कहीं उन्हें बवासीर न हो जाए।

इधर रम्मो पिछले कोई दो महीनों से ग़ायब थी। जिस दिन वह गायब हुई उससे पहली रात मुहल्ले में रत्तो-बिन्नो का रात-भर के लिए नाच हुआ था। पीपल के पेड़ के नीचे दरी बिछाकर मुहल्ले के ठिलुओं से लेकर उस्तादों तक के हुजूम की वाहवाही लूटती हुई रत्तो-बिन्नो का आकर्षण घरवालियों के बीच भी कम नहीं था। रत्तो जरा मोटी और ठिगनी थी, बिन्नो लम्बी-लम्बी और दुबली। गला दोनों का सुरीला था, लेकिन अदाओं में बिन्नो काफी आगे थी।

नाच-गाने से बहुएँ बिगड़ न जाएँ, इसलिए ज्यादातर बूढ़ियों ने बहुओं को धमकाकर अन्दर कर दिया था और खुद रात-भर जागरण किया। ढोंढ़े की अम्माँ ने आटे-चावल के टिन रखकर मुँडेर से सारी रात नाच देखा। पद्दन की अम्माँ ने अटारी पर चारपाई टिकाकर चढ़ने की कोशिश की तो चारपाई चरमरा गयी और वे भदभदाकर नीचे आ रहीं।

दो-चार बार 'उई अम्माँ' और 'हाय-हुई' करने के बाद उन्होंने अपनी कमर थामे-थामे सिद्दा लगायी और काँख-काँखकर सारी रात फिक्-फिक् हँसती रहीं।

थोड़ी देर बाद रम्मो भुजैन भी पद्दन की अम्माँ के पास आ धमकी। उम्र में अन्तर होते हुए भी मन की हमजोली का ही असर कहिए कि भोर तक उन दोनों 'सत भतरियों' को दाद देती रहीं। भोर पहर सीढ़ी से हड़-बड़ाता हुआ बदहवास पद्दन ऊपर आया।

उसकी आहट से पद्दन की अम्माँ खिसियाकर चौंकी। लेकिन पद्दन ने खिसियाहट की तरफ ध्यान दिये बिना लपककर उनके दोनों कन्धे पकड़े और झकझोरकर बोला, "अम्माँ ! अम्माँ !"

"अरे भया क्या रे ?" अम्माँ ने झल्लाकर पूछा।

"अम्माँ, वो···वो कहाँ है ?"

"अरे कौन रे ?"

"क-क-कलावती । कलावती नहीं है ?"

"ऐ क्या बकता है रे ?" पद्दन की अम्माँ हड़बड़ाकर खड़ी हो गयीं, "ऐ होगी कहीं ।"

"नहीं हैगी अम्मां, कहीं नहीं हैगी । सब जगां देख लिया मैंने···"

पद्दन की अम्माँ का कलेजा डरे हुए चूहे की तरह उनकी पसलियों की चूहेदानी में ढपाढप टक्करें मारने लगा । उन्होंने जोर से पद्दन को झटका दिया, "हाय राम, तो चिल्लाता काहे है ? ऐ होगी कहीं !"

रम्मो इन सम्वादों में किसी रहस्य की गन्ध पाकर गौर से सुन रही थी । पद्दन की अम्माँ की नजर रम्मो पर पड़ी तो वे और ज्यादा घबरायीं । उन्होंने बात वहीं खत्म की और सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आ गयीं ।

रम्मो ने अनुमान लगा लिया कि बात क्या हो सकती है । पद्दन की अम्माँ से भी छिपा न रहा कि रम्मो को रहस्य मालूम हो गया । इसी दिन का उन्हें डर था । लेकिन होनी शायद होकर ही रही ।

जब से पद्दन की बहू गौने में आयी उसे तीन बार कोठरी में बन्द किया जा चुका था, चार बार फ़ाके कराये गये थे और पाँच-छः बार धुनाई की जा चुकी थी । लेकिन होनी पर किसका बल चलता है !

पद्दन की अम्माँ ने घर का कोना-कोना छान मारा, यहाँ तक कि मटकों और बाल्टियों तक में झाँक डाला, लेकिन बहू का पता नहीं चला । लाचार होकर अम्माँ से पहले खुद पद्दन ने ही सिर थामकर भों-भों रोना शुरू कर दिया ।

पेड़ावाली उस वक्त कुल्ला करती हुई यह सोच रही थी, क्यों न वह असाढ़ी के मेले में खोए की जगह कागज की लुगदी डालकर बरफी जमा ले ! अचानक भों-भों की आवाज सुनी तो मुँह ऊँचा करके आवाज दी, "अरी ओ पद्दन की माँ ! जे कौन रोने लगा ?"

पद्दन की अम्माँ घबरा गयीं । फिर भी उन्होंने बात बना ली, बोलीं, "कुछ नहीं जिया, ये पद्दन सोते-सोते बर्राने लगा ।"

लेकिन फिर उन्होंने सोचा कि यह जगहर का मौका है, कहीं कोई

आहट लेता या पूछता हुआ ऊपर ही न आ धमके, इसलिए वह खुद ही दरवाजा खोलकर बाहर आ गयीं । लेकिन बाहर निकलते ही उनका जी धक् से हो गया । उन्होंने देखा कि उनके दरवाजे से अचानक मुड़कर रम्मो तेजी से जीने की तरफ़ जा रही है । रम्मो की इस जासूसी पर विवशता के दाँत पीसती हुई वह छज्जे के सहारे टिक गयीं । उनकी आँखों से मोटे-मोटे आंसू लुढ़कने लगे ।

सबेरे-सबेरे पहला काम उन्होंने यह किया कि पद्दन को अपनी मौसी के घर भेज दिया । इसके बाद वह दरवाजा बन्द करके कमरे में पड़ रहीं । किसी ने पूछा तो अन्दर से ही 'आह-ऊह' करके बोलीं कि उनकी तबियत खराब है । दोपहर होते-होते लछमीचन्द की लुगाई और रुक्की में जाने क्या मिस्कोट हुई कि वे पद्दन की माँ की बीमारी के हाल-चाल लेने आ धमकीं । रुक्की की चकर-मकर होती आँखें देखकर पद्दन की अम्माँ की आँखें सुलग गयीं । रही-सही कसर पूरी कर दी लछमीचन्द की लुगाई ने । उसने पूछा, "ऐ भैना, बहुरिया सबेरे से नहीं दिक्खी !"

"ऐ लेओ, बताया तो कित्ती बार कि रात में तार आया हता । उसकी अम्माँ बीमार है, सो देखने गयी हैगी । और क्या परपंच बघारो हौ उसमें तुम लोग !" पद्दन की अम्माँ ने बड़े तीखेपन से सचाई का परदा अटकाकर मुँह मोड़ लिया । थोड़ी देर बाद दोनों नीचे उतर गयीं । पद्दन की अम्माँ ने पहले तो गिनकर दस-बारह गालियाँ निकालीं और फिर मुँह ढककर पड़ रहीं । बीमार वह सचमुच दीखने लगी थीं, इसलिए अटकलें उलझन बनकर जहाँ-की-तहाँ रह गयीं ।

दोपहर चढ़ते ही जैसे पद्दन की अम्माँ को बुखार-सा चढ़ आया । उन्हें इस बात का यकीन हो गया कि आज की बैठक में उनकी ग़ैरहाजिरी और रम्मो की जासूसी से जो गुल खिलेगा वह उन्हें कहीं का नहीं रखेगा ।

लेटे-लेटे कई बार उनके मन में आया कि उठकर वह रम्मो से मिलें, उसे पटाने की कोशिश करें, लेकिन उनसे उठा नहीं गया । उन्हें लगा जैसे उनका खून धीरे-धीरे सूखता जा रहा है । प्यास गले में काँटे चुभोने लगी । इच्छा हुई कि किसी से पानी को कहें, पर उसकी भी हिम्मत नहीं हुई । फिर न जाने कब वह सो गयीं ।

जब उनकी नींद खुली तो उन्होंने देखा कि कुन्दन की पोपली ताई, उन पर झुकी उन्हें पुकार रही हैं। पद्दन की अम्माँ भड़भड़ाकर उठ बैठीं। कमरे के उजाले से उन्हें लगा कि शाम होने वाली है। ताई को देखकर वह बुरी तरह घबरा गयी थीं। लेकिन ताई सिर्फ हालचाल लेकर ही नीचे उतर गयीं। मालूम हुआ कि दोपहर को आज बैठक ही नहीं हुई। इस बात से उन्हें बेहद सन्तोष हुआ। लेकिन इससे भी ज्यादा सुकून हुआ एक और खबर से। रम्मो सुबह से गायब थी।

रम्मो बब्बन पानवाले के साथ भाग गयी—जिस वक्त पद्दन की अम्माँ ने यह वाक्य गढ़ा उस वक्त उन्हें ऐसा महसूस हुआ जैसे उनके हाथ में हनुमान की गदा आ गयी हो, जिससे वह किसी भी परपंच का सर तोड़ देंगी। उनके चेहरे का पीलापन गायब हो गया। कमर तन गयी। भारी-भरकम कूल्हे सकेलकर वे दूसरे दिन फिर उसी जीनेवाले सिंहासन पर आ विराजीं।

उस दिन की बैठक का नाम लछमीचन्द की लुगाई ने दिया था—'सलीमा वाली बैठक।' खूब रस ले-लेकर पद्दन की अम्माँ ने बताया कि रत्तो-बिन्नो के नाच के वक्त रम्मो और बब्बन के क्या-क्या गुल खिल रहे थे। रुक्की ने एक-एक बारीकी पर प्रकाश डालने का आग्रह किया और एक-दूसरी को कुहनियाकर लुगाइयों ने बतरस में गुलाबजामुन की तरह डुबकियाँ लगायीं। पद्दन की अम्माँ लोकमत को बहू की घटना की तरफ से रम्मो की तरफ मोड़कर सन्तोष के बीड़े चबाती रहीं।

लेकिन अभी दो महीने भी नहीं हुए थे कि बब्बन पानवाला वाकायदा फिल्मी गाना गाता हुआ अपनी दूकान पर आ धमका। वह पद्दन का जिगरी दोस्त था। दरअसल पद्दन की बीवी के गोलमाल का नायक वही था। पद्दन की अम्माँ ने बीसों बार बेटे को उसके बारे में आगाह किया था। खुद बब्बन को भी अप्रत्यक्ष रूप से गालियों का तोहफा भिजवा चुकी थीं। लेकिन पद्दन की मजबूरी यह थी कि वह अफीम खाता था और बब्बन अफीम तृष्णा की नदिया पार करानेवाला एकमात्र माँझी।

नतीजा सामने था। नाच के दिन उसने पद्दन को एक डबल खुराक निगलवा दी और इसके बाद उसकी गोरी-गोरी, गोल-गोल बीवी को लेकर

चम्पत हो गया।

इसी बीच पद्दन की अम्माँ ने पहले तो सभासदों को तरह-तरह की सूचनाओं में व्यस्त रखा और फिर एक दिन बहू के बीमार पड़ जाने की खबर दे डाली। इस बीच मुंशीजी पहले से भी ज्यादा सुबह चले जाते और देर से लौटते। आखिरकार एक सुबह अचानक पद्दन की अम्माँ ने टेसुए बहाकर लोगों को बताया कि बहू बेचारी जाती रही।

लेकिन इस मातम को एक हफ्ता भी नहीं बीता कि बब्बन आ टपका। सबसे पहले पछाड़ खायी पद्दन ने। उसे यह बखूबी मालूम था कि उसकी बीवी किसके साथ गई है, पर वह इस ख़याल में था कि बब्बन के साथ बीवी भी लौटेगी ही। बब्बन अकेले लौटा तो उसने सिर पीट लिया।

मगर अम्माँ को एक और चिन्ता सताने लगी। गुण्डा-तो-गुण्डा। मुहल्ले के छोकरों से बहू की चर्चा जरूर करेगा। छोकरे बात फैलाएँगे। इसलिए बतौर सुरक्षात्मक कार्यवाही उन्होंने एक नया शिगूफ़ा छेड़ा पुजारिन की बिटिया का। यह सच था कि कम-से-कम कुछ दिन लुगाइयों का ध्यान बँटाये रखने के लिए यह किस्सा काफी था। तब कुछ और सोचा जाता।

पर अब यह आ टपकी रम्मो। बाप-रे-बाप! पद्दन की अम्माँ को लगा जैसे उन्हें किसी ने सिर के बल उलटकर खड़ा कर दिया हो।

रम्मो की ओर मुँह फैलाए ताकती लुगाइयों को जब होश आया तो वे फिर पद्दन की अम्माँ की ओर मुखातिब हुईं। लेकिन कुर्सी एकदम खाली थी। पता ही नहीं चला कि अम्माँ कब सरक लीं। एक-दूसरे को सनकियाती-कोंचती लुगाइयाँ कुछ देर तो बैठी रहीं कि शायद अम्माँ लौटें, लेकिन जब वे नहीं लौटीं तो सभासदों का हुजूम उनके कमरे की तरफ खबर लेने चला।

कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द था। अन्दर से पद्दन की अम्माँ के कराहने की आवाज आ रही थी। रुक्की ने धीरे से दरवाजा थपथपाया। थोड़ी देर बाद कराहते हुए पद्दन की अम्माँ ने अन्दर से कहा कि उनकी तबियत फिर ख़राब हो गयी है।

□